जैन परम्परा में
ऋद्धि–सिद्धि

मनोज कुमार टॉक,
शोधार्थी,
जैनविद्या तुलनात्मक धर्म एवं दर्शन विभाग, जैन
विश्वभारती संस्थान, लाडनूँ

प्राचीनकाल से ही भारतीय ऋषि मुनि एवं अन्य सामाजिक प्राणी ऋद्धि–सिद्धियों के अस्तित्व को स्वीकार करते आये हैं। जिस समय देश में दार्शनिक सिद्धान्तों का विकास हुआ, उसी समय से ही ऋद्धि–सिद्धियों का वैज्ञानिक वर्गीकरण प्राचीन ग्रन्थों में मिलता है। साधक योग साधना द्वारा योग की सिद्धि करता है, मोक्ष प्राप्ति का प्रयास करता है, साधना के द्वारा वह संचित कर्मों का क्षय कर देता है।[1] कर्म–क्षय की आन्तरिक साधना के प्रभाव से साधक में अनेक विशिष्ट शक्तियाँ जाग्रत हो जाती है। इसलिए वे चमत्कारी प्रतीत होती है। अतः जन साधारण इनकी ओर सरलता से आकृष्ट और प्रभावित हो जाता है।

योग साधना के द्वारा प्राप्त अपूर्व क्षमताओं को जैनदर्शन में लब्धि, योगदर्शन में विभूति और बौद्धदर्शन में ऋद्धि या अभिज्ञा कहते है। 'लब्धि' अर्थात् वीर्यान्तराय के क्षयोपशम और नामकर्म के उदय से प्राप्त विशिष्ट शक्ति से है। ये लब्धियाँ अलौकिक शक्तियों से सम्पन्न और जन सामान्य को आश्चर्य चकित करने वाली होती है। साधक इन ऋद्धियों के द्वारा असम्भव कार्यों को भी आसानी से करने में सक्षम हो जाता है। ये सभी ऋद्धियाँ योग साधना के द्वारा प्राप्त होती है।

1. योगशास्त्र 1/7

Scanned with CamScanner

अतः ऋद्धियों का वर्णन वैदिक, बौद्ध और जैन तीनों परम्पराओं में प्राप्त होता है।

ऋद्धि–सिद्धि का स्वरूप एवं भेद :

प्राचीनकाल से ही ऋद्धि–सिद्धि की उत्पत्ति के सम्बन्ध में यह जिज्ञासा रही है कि इन्हें किस प्रकार से प्राप्त किया जा सकता है ? कुछ दार्शनिकों का यह मानना है कि ये ईश्वरीय प्रसाद व तन्त्र–मन्त्र से प्राप्त होती है। किन्तु महर्षि पतंजलि योग सूत्र में ऋद्धि–सिद्धि की प्राप्ति के सम्बन्ध में वर्णन प्राप्त होता है। जिस में कहा गया है कि ये ऋद्धियाँ–

1. जन्म से 2. औषधि से 3. मन्त्र से 4. तप से 5. समाधि से प्राप्त की जा सकती है।[1]

बौद्ध परम्परा में लब्धियों को अभिज्ञा कहा गया है जिसे दो भेदों में विभक्त कर सकते है– 1. लौकिक 2. लोकोत्तर। इसी प्रकार जैन परम्परा में सिद्धियों को तीन भागों में विभक्त किया गया है– शारीरिक, मानसिक, आत्मिक। जैन ग्रन्थों में इन ऋद्धि–सिद्धियों को अनेक भेदों के माध्यम से समझाया गया है तथा इनके भेद–प्रभेदों की संख्या विविध ग्रन्थों में अलग–अलग है।

सिद्धि की प्रक्रिया :

योग साधना से होने वाली उपलब्धियों का वर्णन मनुष्य के सामान्य ज्ञान से परे की वस्तु है। साधारणतया जीवन में ऐसा घटित नहीं होता किन्तु मन की

1. पातंजलि योग सूत्र, 4/1

Scanned with CamScanner

एकाग्रता के द्वारा कुछ ऐसा घटित होता है, जिसकी मानसिक चंचलता की स्थिति में कल्पना भी नहीं की जा सकती। हमारे शरीर के भीतर कुछ ऐसे शक्ति–स्त्रोत विद्यमान है जिनका चैतसिक चंचलता की स्थिति में कोई उपयोग नहीं होता।

एकाग्रता की स्थिति में वे स्त्रोत उद्घाटित हो जाते हैं और वे शरीर में विशेष प्रकार की रासायनिक क्रिया उत्पन्न करते है। उनके द्वारा असंभव प्रतीत होने वाले परिवर्तन सहज ही घटित हो जाते हैं, किन्तु यह कुछ ही दिनों में घटित नहीं होता। इसकी सिद्धि के चार उपाय है–

1. आस्था बन्ध
2. दीर्घकालिक अभ्यास
3. निरन्तर अभ्यास
4. कर्मविलय

साधना में दृढ़ आस्था हुए बिना सफलता संभव नहीं होती। उसके होने पर भी यदि अभ्यास दीर्घकाल तक न चले तो सफलता संभव नहीं है। दीर्घकालिक अभ्यास होने पर भी यदि वह निरन्तर न चले, उस स्थिति में साधक सफल नहीं हो सकता। इन सबके होने पर भी बन्धन–विलय से प्राप्त योग्यता अपेक्षित रहती है। इन सबका समुचित योग होने पर जो असंभव प्रतीत होता है, वह संभव बन जाता है।

उक्त उपलब्धियों से भी अधिक महत्त्वपूर्ण होती है। अतीन्द्रिय ज्ञान की उपलब्धि। स्थूल मन की एकाग्रता होने पर वह भी घटित हो जाती है।[1]

वैदिक परम्परा में ऋद्धि–सिद्धि :

1. मनोनुशासनम, पृ.सं. 130

Scanned with CamScanner

श्वेताश्वरोपनिषद् परम्परा में आध्यात्मिक साधना के लिए उपनिषदों का महत्त्व सर्वोपरि है। श्वेताश्वरोपनिषद् के अनुसार लब्धियों से निरोगता, जरा–मरण का अभाव, शरीर का हल्कापन, आरोग्य, विषय–निवृत्ति शरीर–कान्ति,

स्वर–माधुर्य, मल–मूत्र की अल्पता आदि योग प्रवृत्ति से उपलब्ध होते है।[1]

पौराणिक साहित्य में सिद्धियों के 18 प्रकार बताये गये हैं।[2] इनमें से 'अणिमा', 'महिमा', 'लघिमा' ये तीन शारीरिक सिद्धियाँ है। इन्द्रिय सिद्धि को 'प्राप्ति' कहा गया है। 'प्राकाम्य' नामक सिद्धि से साधक श्रुत और दृष्ट पदार्थों को इच्छानुसार अनुभव कर लेता है। 'ईषिता' सिद्धि से साधक माया के कार्यों को प्रेरित करता है। 'वशिता' सिद्धि का धारक साधक प्राप्त भोगों में आसक्त नहीं होता। 'कामावसायिता' सिद्धि द्वारा साधक अपनी इच्छुनसार सुख की उपलब्धि करने में सक्षम हो जाता है।[3] इसके अतिरिक्त 1. त्रिकालज्ञत्व 2. अद्वन्द्वत्व (शीत–उष्ण, सुख–दुख आदि द्वन्द्वों से पराजित न होना)

3. परचित अभिज्ञान 4. प्रतिष्टम्म (अग्नि, सूर्य, जल, विष आदि की शक्ति को स्तम्भित कर देना) 5. अपराभव– ये पांच सिद्धियाँ है।[4] ये सभी सिद्धियाँ योगियों को प्राप्त होती हैं।

बौद्धदर्शन में ऋद्धि–सिद्धियाँ :

1- श्वेताश्वरोपनिषद् 2/12–13

2- श्रीमद्भागवत महापुराण स्कन्ध 11, अ. 15 श्लोक 3–4 3. वही,
श्लोक 6–7

4- वही, श्लोक–8

Scanned with CamScanner

बौद्धदर्शन के अनुसार समाधि भावना से अति मानसिक शक्तियों की भी प्राप्ति होती है। इन सब उपलब्धियों को बौद्धदर्शन में 'अभिज्ञा' कहते हैं। अभिज्ञा के दो भेद किये गये हैं– 1. लौकिक और 2. लोकोत्तर[1]।

लौकिक अभिज्ञा के पांच भेद हैं–

1. ऋद्धिविध 2. दिव्य श्रोत 3. चेतः पर्यायज्ञान

4. पूर्वनिवासानुस्मृतिज्ञान 5. च्युत्युत्पाद ज्ञान।

1- ऋद्धिविध : चौदह आकारों से चित्त का भली प्रकार दमन करना चाहिए। चित्त का दमन हो जाने पर जब चतुर्थ ध्यान प्राप्त करने के पश्चात् साधक एकाग्र, शुद्ध, निर्मल, क्लेशों से रहित मृदु, मनोरम और निश्चल चित्तवाला हो जाता है। तब वह ऋद्धिविध को प्राप्त करता है और अनेक प्रकार की ऋद्धियों का अनुभव करने लगता है।

(i) अधिष्ठान ऋद्धि – अनेक रूप बनाने का क्षमता।

(ii) विकुर्वण ऋद्धि – विविध प्रकार की सेनाओं की निर्माण क्षमता।

(iii) मनोमय ऋद्धि – अन्य के मन में उठने वाले भावों का ज्ञान।

(iv) ज्ञान–विस्फार ऋद्धि – उत्पत्ति से पहले, पीछे या उसी क्षण ज्ञान के अनुभव से उत्पन्न हुई शक्ति विशेष

(v) समाधि–विस्फार ऋद्धि – समाधि के पहले, पीछे या उसी क्षण समाधि के अनुभव से प्राप्त शक्ति विशेष।

(vi) आर्य ऋद्धि – प्रतिकूल में अनुकूल संज्ञा।

(vii) कर्म–विपाकजा ऋद्धि – आकाश गामिनी शक्ति।

1- विसुद्धिमग्गो, मग्ग 1, पृ.सं.–92

Scanned with CamScanner

(viii) पुण्यवती ऋद्धि – चक्रवर्ती, बलदेव, वासुदेव आदि की ऋद्धि।

(ix) विद्यामय ऋद्धि – विद्याधरों की तरह आकाश गमन या रूप–दर्शन।

(x) इज्झनठेन ऋद्धि – संप्रयोग विधि, शिल्प कार्य आदि में कुशलता।

इनको प्राप्त करने वाला भिक्षु एक से अनेक होता है, प्रकट और अदृश्य होता है, आरपार बिना लगे जाता है, पृथ्वी में जल की भांति गोता लगाता है, जल पर पैदल चलता है, आकाश में पालथी मारकर बैठता है, चांद–सूरज को हाथ से स्पर्श करता है, दूर को पास कर देता है, मनोमय शरीर का निर्माण करता है।

2- **दिव्यश्रोत** : एक स्थान पर बैठकर मन में विचारे हुए स्थानों के शब्दों को सुनने को दिव्य श्रोत ऋद्धि कहते हैं। चतुर्थ ध्यान से उठकर जब साधक दिव्य श्रोत ज्ञान की प्राप्ति के लिए अपने चित्त को लगाता है, तब वह अपने अलौकिक शुद्ध दिव्य–श्रोत से दोनों प्रकार के मनुष्यों के भी और देवताओं के भी शब्द सुनने लगता है।

3- **चेतःपर्याय ज्ञान** : अपने चित्त से दूसरे व्यक्ति के चित्त को जानने के ज्ञान को चेतः पर्याय ज्ञान कहते है। इसे प्राप्त करने वाले साधक को दिव्य–चक्षुवाला होना चाहिए। उस साधक को आलोक की वृद्धि करके दिव्य चक्षु से दूसरे के हृदय के सहारे विद्यमान रूधिर के रंग को देखकर चित्त को
ढूंढना हुए चेतः पर्याय ज्ञान को शक्ति सम्पन्न बनाना चाहिए।

4- **पूर्वनिवासानुस्मृति ज्ञान** : पूर्व जन्मों की बातों के ज्ञान को पूर्वनिवासानुस्मृति ज्ञान कहते हैं। जब साधक इस ज्ञान को प्राप्त कर लेता है तब वह अनेक पूर्व जन्मों की बातों को स्मरण करता है। जैसे–एक जन्म से लेकर हजार, लाख, अनेक संवर्त–कल्पों, अनेक विवर्त–कल्पों को जानता है।
"मैं वहां इस नाम वाला, इस गोत्र वाला, इस रंग, इस आहार को खाने वाला,

Scanned with CamScanner

इतनी आयु वाला था, मैने इस प्रकारक` सुख–दुःख का अनुभव कियाँ सो मैं वहां से मरकर यहां उत्पन्न हुआ हूँ। इस तरह आकार–प्रकार के साथ वह अनेक पूर्व–जन्मों को स्मरण करता है।

5- च्युत्युत्पाद ज्ञान : दिव्य चक्षु के ज्ञान को ही च्युत्युत्पाद ज्ञान कहते हैं। जो साधक इसे प्राप्त करना चाहता है, उसे चतुर्थ ध्यान से उठकर प्राणियों की च्युति एवं उत्पत्ति को जानने के लिए विचार करने पर दिव्य–चक्षु उत्पनन हो जाता है। इसके लिये किसी विशेष साधन की आवश्यकता नहीं। साधक आलोक फैलाकर नरक एवं स्वर्ग के सभी जीवों के कर्मों तथा उनके विपाकों को जान सकता है। उसे यथाकर्मोपग ज्ञान और अनागतांश ज्ञान सिद्ध हो जाते हो जाते है। वह च्युत्युत्पादज्ञानी कहा जाता है।

ऋद्धिविध, दिव्यश्रोत, चेतःपर्यायज्ञान, पूर्वनिवासानुस्मृति ज्ञान और च्युत्युपाद ज्ञान –ये पांचों अभिज्ञाएं लौकिक है। किन्तु जब कोई अर्हत् इन्हें प्राप्त करता है, तब ये ही लोकोत्तर कही जाती है और इनके साथ आश्रव–क्षयज्ञान और जुड़ जाता है। इस प्रकार लौकिक अभिज्ञाएं पांच और लोकोत्तर अभिज्ञाएं छह हैं।

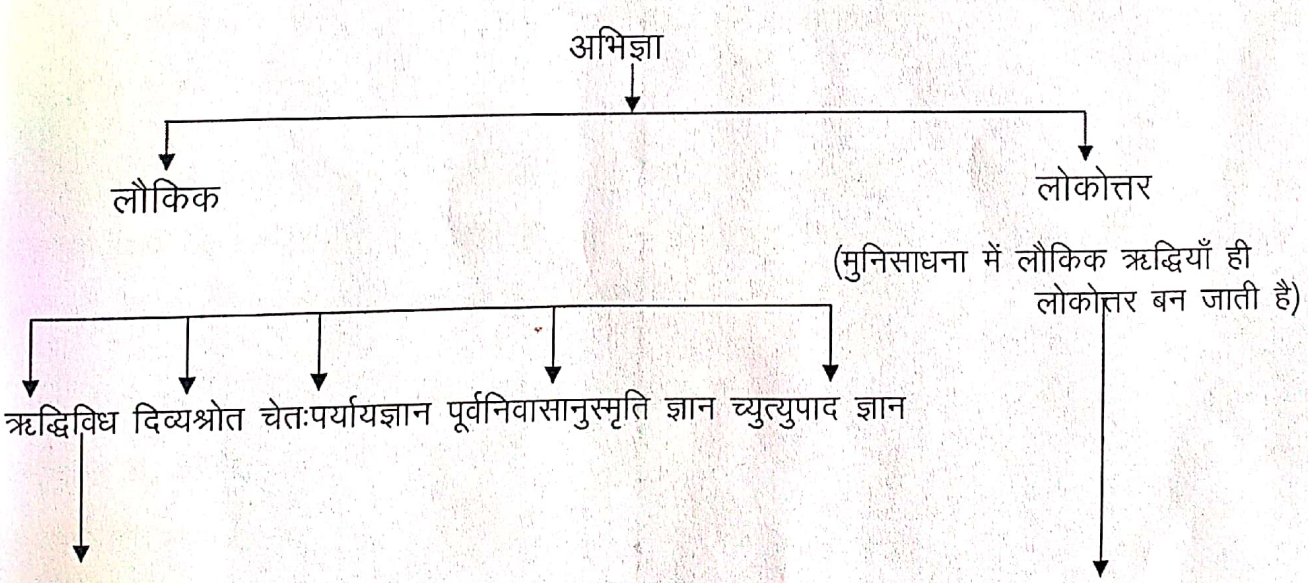

Scanned with CamScanner

1. अधिष्ठान ऋद्धि
2. विकुर्तण ऋद्धि
3. मनोमय ऋद्धि
4. ज्ञान–विस्फार ऋद्धि
5. समाधि–विस्फार ऋद्धि
6. आर्य ऋद्धि
7. कर्म–विपाकजा ऋद्धि
8. पुण्यवती ऋद्धि
9. विधामय ऋद्धि
10. इज्झनठेन ऋद्धि

1. ऋद्धिविध
2. दिव्यश्रोत
3. चेतः पर्यायज्ञान
4. पूर्वनिवासानुस्मृति ज्ञान
5. च्युत्युत्पाद ज्ञान
6. आश्रव–क्षयज्ञान

जैन परम्परा में ऋद्धि–सिद्धि :

जैन परम्परा में सिद्धियों को लब्धियाँ कहा गया है। आगम ग्रन्थों पुराणों और योग विषयक ग्रन्थों में इन लब्धियों का वर्णन प्राप्त होता है।

भगवती सूत्र[1] में अनेक स्थानों पर पर लब्धियों का वर्णन हुआ है। स्थानांग सूत्र[2], औपपातिक सूत्र[3], प्रज्ञापना सूत्र[4] में भी लब्धियों का वर्णन मिलता है। इसमें शारीरिक, मानसिक और आत्मिक सभी प्रकार की लब्धियाँ मिलती है। लब्धियों की संख्या तिलोयपण्णति[5] में

---

1. भगवती सूत्र, 8/2; 5/4/189; 14/7/521–522 2.
स्थानांग सूत्र, 2/2
3- औपपातिक सूत्र, 24
4- प्रज्ञापना पद 6, सूत्र 144
5- तिलोयपण्णत्ति भाग 1/4/1067–91

Scanned with CamScanner

64, आवश्यक निर्युक्ति[1] में 28, षट्खण्डागम्[2] में 44, विद्यानुशासन में 48, मन्त्रराजरहस्य[3] में 50, प्रवचन–सारोद्धार[4] में 28 और विशेषावश्यक भाष्य[5] में 28 है इनका वर्गीकरण भी भिन्न–भिन्न मिलता है। इनके अतिरिक्त हेमचन्द्र के योगशास्त्र[6] और शुभचन्द्र रचित ज्ञानार्णव[7] में अनेक लब्धियों का वर्णन है इनमे लब्धियों का वर्णन चमत्कारिक शक्तियों के रूप में हुआ है, जैसे–जन्म–मृत्यु का ज्ञान, शुभ–अशुभ शकुनों से भविष्य का ज्ञान अथवा होने वाली घटनाओं को जान लेना, काल ज्ञान, परकाया, प्रवेश आदि।

यहां प्रवचनसारोद्धार के अनुसार अट्ठाईस भेद निम्न हैं–

1- आमोसहि
2- क्षेलौषधि लब्धि
3- जल्लोषधि
4- मलौषधि
5- विप्रौषधि
6- सर्वोषधि
7- अवधिलब्धि
8- ऋजुमति
10- चारणलब्धि
11- आशीविषलधि
12- केवल लब्धि
13- गणधरलब्धि
14- पूर्वधरलब्धि
15- अर्हत्लब्धि
16- चक्रवर्तीलब्धि
17- बलदेवलब्धि
18- वासुदेवलब्धि
20- कोष्ठक
21- पदानुसारिणी
22- बीजबुद्धि
23- तेजोलब्धि
24- आहारकलब्धि
25- शीतललेश्या लब्धि
26- वैक्रियलब्धि
27- अक्षीण महानसलब्धि

---

1. आवश्यक निर्युक्ति 69–70
2. षट्खण्डागम, खण्ड 4, 1/9 3.
मंत्रराज रहस्य, पृ. 1–7
4. प्रवचनसारोद्धार, 270/1492–1508 5.
विशेषावश्यक भाष्य, 506–509
6- योगशास्त्र, प्रकाश 5 व 6
7- ज्ञानार्णव, प्रकरण 26

Scanned with CamScanner

9. विपुलमति

19. क्षीर–मधु–सर्पिशस्त्रवलब्धि

28. पुलाकलब्धि

1- **आमोसहि** : इस लब्धि के प्रभाव से योगी के शरीर–स्पर्श मात्र से रोगी व्यक्ति स्वस्थ हो जाता है। तपस्वियों और योगियों के चरण–स्पर्श की परम्परा के पीछे यह भी एक कारण हो सकता है।

2- **क्षेलौषधि लब्धि** : जिस ऋद्धि के प्रभाव से लार, कफ, अक्षिमल और नासिकामल शीघ्र ही जीवों के रोगों को नष्ट करता है वह क्षेलौषधि ऋद्धि है।

3- **जल्लोषधि** : पसीने के आश्रित अंगरज जल्ल कहा जाता है। जिस ऋद्धि के प्रभाव से उस अंगरज से भी जीवों के रोग नष्ट होते है वह जल्लौषधि लब्धि है।

4- **मलौषधि** : जिस शक्ति से जिह्वा, ओठ, दांत, नासिका और श्रोत्रादिक का मल भी जीवों के रोगों को दूर करने वाला होता है वह मलौषधि नामक ऋद्धि है।

5- **विप्रौषधि** : जिस ऋद्धि के प्रभाव से महामुनियों का मूत्र व विष्टा भी जीवों के बहुल भयानक रोगों को नष्ट करने वाला होता है, वह विप्रौषधि नामक लब्धि है।

6- **सर्वोषधिलब्धि** : जिस ऋद्धि के बल से दुष्कर तप से युत्त मुनियों का स्पर्श किया हुआ, जल व वायु तथा उनके रोम और नखादिक व्याधि के हरने वाले हो जाते हैं, वह सर्वोषधि नामक ऋद्धि है।

7- **अवधिलब्धि** : अवधि ज्ञान रूपी (स्पर्श, रस, गन्ध, वर्ण वाले) पदार्थों के भूत, भविष्य और वर्तमान तीनों कालों की पर्यायों को जानने की क्षमता।

8- **ऋजुमति** : जो ज्ञान मन में सरल रूप से चिन्तित पदार्थ को जाने उसे ऋजुमति कहते है।

9- **विपुलमति** : जो ज्ञान मन में सरल अथवा कुटिल रूप से चिन्तित पदार्थ को जाने उसे विपुल मति कहते हैं।

Scanned with CamScanner

10- **चारणलब्धि** : चारण, चरित्र, संयम, पापक्रियानिरोध इनका एक ही अर्थ है। इसमें जो कुशल अर्थात् निपुण है वे चारण कहलाते हैं। चारण ऋद्धि के जल चारण, जंधा चारण, फलचारण, पुष्पचारण, पत्रचारण, अग्नि शिखा चारण, धूमचारण, धारा चारण, मक्रटतन्तु चारण, ज्योतिशरण और मारूतच्चारण आदि भेद है।

11- **आशीविषलधि** : जिस शक्ति से दुष्कर तप से युक्त मुनि के द्वारा मर जाओं इस प्रकार कहने पर जीव सहसा मर जाता है, वह आशीर्विष ऋद्धि है।

12- **केवल लब्धि** : जो ज्ञान सभी द्रव्यों को उनकी समस्त पर्यायों सहित जानता है वह केवल ज्ञान है।

13- **गणधरलब्धि** : इस लब्धि के धारक योगी को तीर्थंकर के प्रधान शिष्य गणधर पद की प्राप्ति होती है।

14- **पूर्वधरलब्धि** : इस लब्धि का धारण साधक चौदह पूर्वों का ज्ञान अन्तर्मुहूर्त में प्राप्त कर लेता है।

15- **अर्हत्लब्धि** : इस लब्धि द्वारा साधक को अर्हत् पद की प्राप्ति होती है।

16- **चक्रवर्तीलब्धि** : इस लब्धि द्वारा मनुष्य को चक्रवर्ती पद की प्राप्ति होती है, चौदह रत्न, नवनिधान और छह खण्ड पृथ्वी के स्वामी को चक्रवर्ती कहा जाता है।

17- **बलदेवलब्धि** : बलदेव लब्धि के द्वारा बलदेव पद की प्राप्ति होती है।

18- **वासुदेवलब्धि** : इस लब्धि द्वारा वासुदेव पद की प्राप्ति होती है। वासुदेव अर्द्धचक्री होते हैं। उनका राज्य तीन खण्ड पृथ्वी पर होता है।

19- **क्षीर–मधु–सर्पिशस्त्रवलब्धि** : इस लब्धि के धारक योगी के वचन दूध के समान मधुर, मधु के समान मीठे और घी के समान स्निग्ध हो जाते हैं, अर्थात् सुनने वालों को बहुत ही प्रिय लगते हैं।

Scanned with CamScanner

20- **कोष्ठक लब्धि** : उत्कृष्ट धारणा से युक्त जो कोई पुरूष गुरू के उपदेश से नाना प्रकार के ग्रन्थों से विस्तारपूर्वक लिंग सहित शब्द रूप बीजों को अपनी बुद्धि से ग्रहण करके उन्हें मिश्रण के बिना बुद्धि रूपी कोठे में धारण करता है, उसकी बुद्धि कोष्ठ बुद्धि कही गई है।

21- **पदानुसारिणी** : एक पद के आधार पर पूरे श्लोक या सूत्र को जान लेने की क्षमता। इसके तीन प्रकार है–

- अनुसारिणी
- प्रतिसारिणी
- उभयसारिणी

22- **बीजबुद्धि** : नो इन्द्रियावरण, श्रुतज्ञानावरण और वीर्यान्तराय, इन तीन प्रकार की प्रकृतियों के उत्कृष्ट क्षयोपशम से विशुद्ध हुए किसी भी महर्षि की जो बुद्धि संख्यात स्वरूप शब्दों के बीच में से लिंग सहित एक ही बीज भूत पद को परके उपदेश से प्राप्त करके उस पद के आश्रय से सम्पूर्ण श्रुत को विचार कर ग्रहण करती हे, वह बीज बुद्धि है।

23- **तेजोलब्धि** : तेजो लब्धि सम्पन्न साधक का तैजस् शरीर इतना तीव्र और बलशाली होता है कि वह अपने शरीर से तेजोलेश्या निकाल सकता है। तेजो लेश्या के पुदगल अत्यधिक प्रकाशयुक्त और ज्वलनशील होते है वे जिस स्थान पर प्रक्षिप्त होते है उसे भस्म कर देते है। उत्कृष्ट तेजोलेश्यालब्धि सम्पन्न साधक 16) देशों को भस्म कर सकता है।

24- **आहारकलब्धि** : यह लब्धि पूर्वधर साधकों को प्राप्त होती है। जब उन्हें किसी तत्व के विषय में शंका हो जाती है और समीप ही उनके गुरू, श्रुत केवली अथवा तीर्थकर नहीं होते, तब वे इस लब्धि का प्रयोग करते हैं।

25- **शीतललेश्या लब्धि** : यह लब्धि तेजो लब्धि से विपरीत स्वभाव की होती है। तेजोलब्धि ज्वलनशील ओर भस्मक होती है, जब कि यह शीतलतादायक है। यह लब्धि भी तैज्स शरीर से

Scanned with CamScanner

ही उत्पन्न होती है। किन्तु इसके परमाणु गोशीर्ष चन्दन अथवा हिम के समान शीतल दायक और प्राणियों के लिए सुखदायी होते हैं।

26- **वैक्रियलब्धि :** इस लब्धि के प्रभाव से साधक अपने अनेक रूप बना सकता है तथा एक ही समय पर विभिन्न स्थानों पर दिखाई दे सकता है एवं अन्य लोगों को विभिन्न प्रकार के दृश्य भी दिखा सकता है।

27- **अक्षीण महानसलब्धि :** इस लब्धि के प्रभाव से साधक सैकड़ों–हजारों व्यक्तियों को एक ही पात्र से भोजन कराके उनकी क्षुधा तृप्ति कर सकता है, फिर भी उस पात्र में भोजन उतना का उतना ही रहता है, वह भोजन तभी समाप्त होता है, जब साधक स्वयं भोजन करके तृप्त हो जाता है।

28- **पुलाकलब्धि :** इस लब्धि से सम्पन्न साधक चक्रवर्ती सेना को पराजित करने में सक्षम होता है।

उपसंहार :

ऋद्धियाँ साधक को संयम और तप साधना के द्वारा प्राप्त होती है। ऋद्धियों की शक्तिरूप अवस्थिति साधक के तैजस् शरीर में होती है इनकी अभिव्यकित बाहर होती है। वह अभिव्यक्ति ही अन्य लोगों को दिखाई देती है। जब भी साधक इन ऋद्धियों का प्रयोग करता है तब लोगों को उन ऋद्धियों और साधक की ऋद्धिसम्पन्नता का ज्ञान हो पाता है।

जैनागमों के अनुसार साधक ऋद्धियों का प्रयोग न करें। यदि कभी विवशतावश, अन्य प्राणियों के कष्ट निवारण हेतु अथवा संघ रक्षा के लिए ऋद्धि का प्रयोग करना ही पड़े तो ऋद्धि–प्रयोग के बाद प्रायश्चित ग्रहण करना आवश्यक आवश्यक है, अन्यथा साधक विराधक बन जाता है। साधक मोक्ष साधना के लिए संयम–तप की आराधना करता है। दशवैकालिक सूत्र के अनुसार तप कर्म

Scanned with CamScanner

की साधना केवल कर्म निर्जरा के लिए करनी चाहिए, किसी भी लौकिक कामना से नहीं[1] फिर भी तप साधन के लौकिक फलस्वरूप साधक को ऋद्धियाँ प्राप्त हो ही जाती है।

जैन दर्शन के अनुसार साधक को ऋद्धियाँ प्राप्त करने के लिए कुछ भी करने की आवश्यकता नहीं, वे तो प्रासंगिक फल के रूप में स्वतः प्राप्त हो जाती है। ऋद्धियों का मोह साधक की मोक्ष साधना में बाधक ही बनता है।[2] अतः साधक को इस मोह से दूर रहकर कर्म निर्जरा एवं मोक्ष साधना में ही लीन रहना चाहिए।

ऋद्धियाँ योग साधना का बाह्य अंग है जैन योग के अनुसार समस्त बाह्य भाव मोक्ष के आत्म–शुद्धि के बाधक है अतः ऋद्धियाँ भी मोक्ष साधना में बाधक ही हैं, साधक नहीं। इसलिये न तो इनकी प्राप्ति के लिए साधना करनी चाहिए और न ही इनका प्रयोग।

---

1. दशवैकालिक सूत्र 9/4 2.

योगशतक, गाथा 83–85

Scanned with CamScanner

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1- आवश्यक निर्युक्ति, आचार्य हरिभद्र–आगमोदय समिति, बम्बई

2- औपपातिक सूत्र, सं. युवाचार्य श्री मिश्रीलाल जी म.सा. 'मधुकर', आगम प्रकाशन समिति ब्यावर

3- तिलोयपण्णत्ति, श्रीयतिवृषमाचार्य, जैन संस्कृति संरक्षक संघ, शोलापुर वि.सं. 2012 4. पांतजल योगसूत्र, सं रामशंकर भट्टाचार्य, भारतीय विद्या प्रकाशन, वाराणसी, 1969 5. प्रवचनसारोद्धार, सपा. महामहोपाध्य विनयसागर, प्राकृत भारती अकादमी, जयपुर–1999

6- प्रज्ञापना सूत्र, सं. युवाचार्य श्री मिश्रीलाल जी म.सा. 'मधुकर', आगम प्रकाशन समिति ब्यावर

7- भगवती सूत्र, सं. युवाचार्य श्री मिश्रीमल जी म.सा. 'मधुकर', आगम प्रकाशन समिति ब्यावर

8- योगशास्त्र, आचार्य हेमचन्द्र (सं.) मुनि समदर्शी श्री ऋषभचन्द्र जौहरी, किशन लाल जैन, दिल्ली, 1963

9- योगशास्त्र, आचार्य हेमचन्द्र, श्रीनिर्गन्थ साहित्य प्रकाशन संघ, दिल्ली–6, सन् 1975

10- विसुद्धिमग्ग, बुद्धघोष, प्रकाशक भारतीय विद्या प्रकाशन, काशी

11- विशेषावश्यक भाष्य, जिनभद्रगणि श्रमण, प्रकाशक–दिव्यदर्शन कार्यालय, अहमदाबाद, 1962

12- स्थानांग सूत्र, सं. युवाचार्य श्री मिश्रीलाल जी म.सा. 'मधुकर', आगम प्रकाशन समिति ब्यावर

13- श्वेताश्वतर उपनिषद, गीताप्रेस, गौरखपुर

14- षट्खण्डागम, पुष्पदन्त भूतबलि, सं. हीरालाल जैन, अमरावती, वि.सं. 1996

15- श्रीमद् भागवत महापुराण, महर्षि वेदव्यास, गीताप्रेस, गोरखपुर, वि.सं. 2043

16- ज्ञानार्णव, शुभचन्द्राचार्य, परमश्रुत प्रभावक मण्डल, रायचन्द आश्रम, आगास सन्, 1987

Scanned with CamScanner